वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 455
ISBN-978-93-84003-66-1

श्री सुपार्श्वनाथ विधान

–रचयित्री –

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी,
दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

जैनधर्म के सातवें तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ भगवान के केवलज्ञान कल्याणक फाल्गुन कृ. षष्ठी (10 फरवरी 2015) के शुभ अवसर पर ''श्री गौतम गणधर वर्ष'' के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र., फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org, E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

COURTESY–JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2541	मूल्य
2200 प्रतियाँ	फाल्गुन कृ. षष्ठी, (10 फरवरी 2015)	20/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी
(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

ॐ नमो मंगलं कुर्यात्, ह्रीं नमश्चापि मंगलम्।
मोक्षबीजं महामंत्रं, अर्हं नमः सुमंगलम्।।

वर्तमान में सभी मनुष्यों का जीवन मंगलमयी हो, इसके लिए देवदर्शन, भगवान का अभिषेक, पूजन, भगवान की भक्ति, मण्डल विधानों का आयोजन मंगल साधन हैं। जिनेन्द्र देव की भक्ति, स्तुति कर्मनिर्जरा में विशेष कारण है। भक्त भगवान की भक्ति करते-करते एक दिन स्वयं भगवान बन जाता है। पूज्य माताजी हमेशा अपने प्रवचनों में कहती हैं प्रत्येक प्राणी की आत्मा भगवान आत्मा है। जैसे दूध में घी विद्यमान है वैसे ही प्रत्येक आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति विद्यमान है।

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी महाराज के प्रथम पट्टशिष्य चारित्र चूड़ामणि आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा को प्राप्त कर, आर्यिका ज्ञानमती नाम को पाकर, पूरे विश्व में ज्ञान का अलख जगाने वाली पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने साहित्य क्षेत्र में एक कीर्तिमान स्थापित किया है।

वर्तमान समय में देखते हैं कि जब हर संसारी प्राणी दिन-रात अपने सांसारिक सुख साधनों को प्राप्त करने के लिय तन-मन से पूर्णरूपेण धनवृद्धि के लिये प्रयासरत रहता है। वहाँ उनके पास कुछ समय भी धर्म कार्यों के लिये शेष नहीं है। हर समय भोगोपभोग की सामग्री को एकत्र करने में ही उनका ध्यान रहता है। कई जन्मों के पुण्य उदय से ही मनुष्य का जिनधर्म एवं जिनवाणी के प्रति अनुराग उत्पन्न होता है। जीव के शुभ-अशुभ भाव ही उसे तदनुसार फल देने वाले होते हैं। श्रावकों के लिये षट् आवश्यक कर्तव्यों में देवपूजा, स्वाध्याय आदि भी कहे गये हैं। जिनमें अनेक पूजा-विधानों को करके भगवान की भक्ति करने का अवसर मिल जाता है और फिर गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के द्वारा लिखी पूजाओं को करने से तो ''एक पंथ दो काज'' वाली सूक्ति चरितार्थ हो जाती है यानि भक्ति के साथ-साथ स्वाध्याय भी हो जाता है। अनेक छोटे बड़े विधान पू. माताजी की लेखनी से प्रसूत हो चुके हैं और निरंतर यह क्रम जारी है। उसी क्रम में ''श्री सुपार्श्वनाथ विधान'' नामक यह पुस्तक भी ग्रंथमाला के माध्यम से प्रकाशित होकर आप तक पहुँच रही है। यह विधान आप सबके लिये मंगल प्रदान करने वाला हो, यही मंगल भावना है।

प्रस्तावना

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

श्री सुपार्श्व तीर्थेश के, चरण कमल जगवंद्य।
मन वच तन से मैं नमूँ, सुख हो परमानंद।।

जैनधर्म के वर्तमानकालीन 24 तीर्थंकरों की श्रृंखला में यह सातवें तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ का विधान है। तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ ने बनारस में पिता सुप्रतिष्ठ एवं पृथ्वीषेणा माँ से ज्येष्ठ सुदी बारस को जन्म लिया, उस समय धनकुबेर ने बनारस नगर में रत्नों की खूब वर्षा की। सौधर्म इन्द्र ने सुमेरु पर्वत पर लेकर भगवान का 1008 बड़े–2 कलशों से अभिषेक किया। भगवान सुपार्श्वनाथ ने ज्येष्ठ सुदी बारस को ही ''सिद्धं नमः' कहकर पंचमुष्ठि केशलोंच कर दीक्षा धारण की। फाल्गुन वदी षष्ठी को भगवान को केवलज्ञान हुआ। धनकुबेर ने समवसरण की रचना कर दी। भगवान उसमें गंधकुटी पर अधर विराजमान हो गए। फाल्गुन वदी सप्तमि को भगवान ने सम्मेदशिखर पर्वत से मोक्षधाम को प्राप्त किया।

भगवान सुपार्श्वनाथ का शरीर आठ सौ हाथ ऊँचा था। मरकतमणि के समान उनके शरीर का वर्ण हरा था। आयु बीस लाख पूर्व वर्ष की थी। भगवान का चिन्ह स्वस्तिक था। 34 अतिशयों एवं 8 प्रातिहार्य से सहित तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ भगवान ने चिरकाल तक भव्यों को अपनी दिव्यध्वनि से धर्मोपदेश देकर धर्म मार्ग में लगाया।

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इस सुपार्श्वनाथ विधान में सर्वप्रथम मंगलाचरण करते हुए श्री समन्तभद्राचार्य द्वारा रचित श्री सुपार्श्वनाथ स्तोत्र पद्यानुवाद सहित दिया है। उसके बाद स्वरचित श्री सुपार्श्वनाथ स्तुति दी है। इसके बाद अर्हंत पूजा है। अर्हंत पूजा के बाद तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ की पूजा एवं पंचकल्याणक के अर्घ्य हैं। इसके बाद 108 अर्घ्य है। प्रथमवलय में 27 अर्घ्य, द्वितीय वलय में 27 अर्घ्य, तृतीय वलय में 27 अर्घ्य और चतुर्थ वलय में भी 27 अर्घ्य हैं।

जापमाला में 108 मणियाँ होती हैं जो कि 108 प्रकार से हुए पापों को दूर करती है। इस विधान में भी पूज्य माताजी ने 108 प्रकार से हुए पापों को दूर करने के लिए अर्थात् समरम्भ, समारम्भ, आरम्भ, मन वच कीने प्रारम्भ आदि से छूटने के लिए 108 अर्घ्य मंत्र सहित दिए हैं। जैसे—

मन वचन काय त्रय योग कहे, संमरंभ समारंभ आरंभा।
कृत कारित अनुमति चउकषाय, इनको आपस में गुणितांता।।
सब इक सौ आठ भेद होते, जो क्रोध करे मन संरंभ से।
इस रहित सुपार्श्वनाथ पूजूँ, मेरा मन क्रोध सभी विनशे।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतमनःसंरंभमुक्ताय श्री सुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इसी तरह के 108 अर्घ्य एवं मंत्र के बाद जयमाला है। जिसमें पूज्य माताजी ने समयसार को लिया है। इसमें लिखा है—निश्चय नय से मेरी आत्मा में रस गंध, स्पर्श, वर्ण नहीं है।

मोहकर्म से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है, द्रव्यकर्म आत्मा से बद्ध नहीं है, भावकर्म मुझे छूते भी नहीं है, मैं एक हूँ, विशुद्ध ज्ञान दर्शन स्वरूपी हूँ, चैतन्य चमत्कार ज्योतिपुंज अरूपी हूँ। पूज्य माताजी ने सम्यक्त्व रत्न को प्राप्त करके कितनी सुन्दर भावना व्यक्त की है–

हे नाथ ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।

भगवान सुपार्श्वनाथ के समवसरण में बलदेव आदि पंचानवे गणधर थे। तीन लाख मुनि, गणिनी मीनार्या आर्यिका सहित 3 लाख 30 हजार आर्यिकाएँ, 3 लाख श्रावक एवं 5 लाख श्राविका थीं, जो कि अणुव्रत को धारण किए हुए थें।

अतिशय महिमा एवं अनंतगुणों से मण्डित भगवान सुपार्श्वनाथ का विधान जो भी महानुभाव करेंगे, करायेंगे, वे सभी एक दिन स्वर्ग के दिव्य सुखों को प्राप्त करेंगे और फिर कर्मभूमि में जन्म लेकर साधु बनकर सिद्धपद को प्राप्त करेंगे, ऐसी भावना पूज्य माताजी ने इस विधान में व्यक्त की है।

इसके बाद बड़ी जयमाला है जिसमें आस्रव तत्त्व का अच्छा वर्णन है जिसे पढ़कर पूजा के साथ–साथ स्वाध्याय का पूरा लाभ प्राप्त होगा। जैसे–

मिथ्यात्व पण पण अविरती, पंद्रह प्रमाद त्रियोग हैं।
चारों कषायों से सहित, भावास्रवों के भेद हैं।।

बड़ी जयमाला के बाद प्रशस्ति है। प्रशस्ति के बाद मेरे द्वारा रचित वाराणसी तीर्थ पूजा है। जिसमें वाराणसी तीर्थक्षेत्र के 8 अर्घ्य भी हैं। इसके बाद श्री सुपार्श्वनाथ भगवान की आरती एवं वाराणसी तीर्थ की आरती है। पृ. 52 पर **'तीर्थंकर माता के 16 स्वप्न दर्शन'** का सुन्दर वर्णन है। अंत में सुन्दर भजन हैं।

इस प्रकार इस विधान में कुल 3 पूजा 108 अर्घ्य एवं 4 जयमाला है। यह विधान सभी के लिए मंगलकारी हो, इस विधान को करके जो घरगृहस्थी में पाप होते रहते हैं वे सभी दूर हों। सुख शान्ति एवं समृद्धि की प्राप्ति हो। यही मंगल भावना है।

पूज्य माताजी दीर्घायु हों, स्वस्थ रहें और हम सभी को दीर्घकाल तक अपने ज्ञान से लाभान्वित करती रहें, यही जिनेन्द्रदेव से मंगल प्रार्थना है।

दो शब्द

–आर्यिका सुदृढ़मती

जैनधर्म अनादि निधन धर्म हैं। इसमें भूतकाल में अनंतानंत तीर्थंकर हो चुके हैं तथा भविष्यकाल में भी अनंत तीर्थंकर होंगे। वर्तमानकाल में जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में 24 तीर्थंकर हुए, जिनमें भगवान वृषभदेव प्रथम तथा महावीर स्वामी अंतिम तीर्थंकर हुए हैं। उन्हीं में 7 वें तीर्थंकर भगवान भगवान सुपार्श्वनाथ जी हैं। जिनका जन्म वाराणसी नगर में महाराजा सुप्रतिष्ठ की महारानी पृथ्वीषेणा के गर्भ से तिथि ज्येष्ठ शु. 12 के दिन हुआ था। युवावस्था में राज्य का संचालन कर प्रजा का न्यायनीति से पालन किया पुनः किसी समय ऋतु का परिवर्तन देखकर वैराग्य को प्राप्त हो गये। तत्क्षण देवों द्वारा लाई गई ''मनोगति'' पालकी पर बैठकर सहेतुक वन में जाकर ज्येष्ठ शु. 12 के दिन ही बेला का नियम लेकर एक हजार राजाओं के साथ दीक्षित हो गए।

सोमखेट नगर के राजा महेन्द्रदत्त ने भगवान को प्रथम आहारदान देने का सौभाग्य प्राप्त किया। 9 वर्ष छद्मस्थ अवस्था में व्यतीत कर फाल्गुन कृ. 6 के दिन केवलज्ञान की उत्पत्ति हुई। आयु के अंत में एक माह पहले सम्मेदशिखर पर जाकर प्रतिमायोग धारण कर आपने फाल्गुन कृ. 7 के दिन सूर्योदय के समय मोक्षधाम को प्राप्त कर लिया।

आज भी भव्यजन सम्मेदशिखर की इक्कीसवीं टोंक (प्रभास कूट) पर जाकर आपके चरण कमलों की वन्दना करके असंख्य कर्मों की निर्जरा करते हैं। इस टोंक की एक विशेषता यह भी है कि इसकी मिट्टी को भक्त जन अपने साथ लाते हैं और कहा जाता है कि इसे शरीर पर लगाने से अनेक प्रकार की शारीरिक व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं और रोगी निरोगी हो जाते हैं।

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रारंभ से ही भगवन्तों के प्रति विशेष भक्ति रही है। पूज्य माताजी हमेशा कहती हैं कि भगवान की भक्ति में अचिन्त्य शक्ति है जिसके बल पर बड़े–बड़े संकट टल जाते हैं और कार्यों की सिद्धि हो जाती है। पूज्य माताजी ने भगवन्तों की जन्मभूमियों का विकास, जीर्णोद्धार कराया तो वीरान पड़ी उन जन्मभूमियों पर आज जनमानस की दृष्टि गई। अब जैन धर्मावलंबी निर्वाणभूमियों के साथ-साथ भगवंतों की जन्मभूमियों की भी यात्रा करके उसकी रज को अपने मस्तक पर चढ़ाकर पुण्य का अर्जन कर रहे हैं।

पूज्य माताजी ने भगवान की भक्ति के फलस्वरूप सदैव अपने प्रत्येक कार्यों को निर्विघ्न संपन्न किया है। साहित्य लेखन में इतिहास रचने वाली ''दिव्य शक्ति'' पूज्य माताजी ने 400 ग्रंथों की रचना करके एक अद्वितीय कार्य किया है। पूजा–विधानों की लंबी श्रंखला में नित्य–नई कतियों की रचना कर रही हैं। ''भगवान श्री सुपार्श्वनाथ विधान'' अब आपके हाथों में पहुँच रहा है जिसके माध्यम से सभी सुपार्श्वनाथ तीर्थंकर की विशेषरूप से भक्ति करके उनके संपूर्ण जीवन वृत्त से भी परिचित हो जाएंगे। मन-वचन-काय, कृत-कारित अनुमोदना से बंधने वाले समस्त पापकर्म नष्ट होकर पुण्याश्रव हो यही सबकी भावना रहती है। यह विधान प्रत्येक करने-कराने वालों की मनोकामनाएँ सिद्ध करे, यही प्रभु से विनती है। इस नवीन कृति को प्रदान करने वाली पूज्य माताजी के चरणों में बारंबार वंदामि।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान–टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि–आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति–अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र–**गोयल, **नाम–**कु. मैना

माता-पिता–श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत–ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा–चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा–वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व–अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि–सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा–हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा–पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा–'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा–जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

विषयानुक्रमणिका

	विषय	पृष्ठ संख्या		विषय	पृष्ठ संख्या
1.	मंगलाचरण	1	8.	जयमाला	36
2.	श्री सुपार्श्वनाथ स्तोत्र (पद्यानुवाद सहित)	1	9.	बड़ी जयमाला	39
			10.	प्रशस्ति	42
3.	श्री सुपार्श्वनाथ स्तुति	3	11.	वाराणसी तीर्थ पूजा	43
4.	अर्हंत पूजा	4	12.	भगवान श्री सुपार्श्वनाथ की आरती	50
5.	तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ जिनपूजा	9			
6.	पंचकल्याणक अर्घ्य	11	13.	वाराणसी तीर्थ की आरती	51
7.	अथ 108 अर्घ्य	12	14.	भजन (तीर्थंकर माता के 16 स्वप्न दर्शन)	52
	(1) प्रथम वलय में 27 अर्घ्य	12			
	(2) द्वितीय वलय में 27 अर्घ्य	17	15.	भजन–नाम तिहारा तारनहारा	55
	(3) तृतीय वलय में 27 अर्घ्य	23	16.	भजन–शाश्वत है तीरथ मेरा	56
	(4) चतुर्थ वलय में 27 अर्घ्य	29			

मण्डल का नक्शा

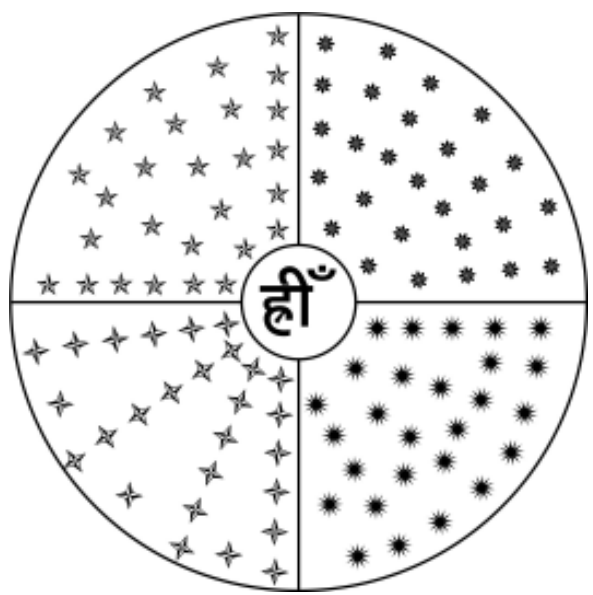

4 कोष्ठक-प्रत्येक कोष्ठक में 27-27 अर्घ्य
कुल पूजा–3, अर्घ्य–108, जयमाला–4।

श्री सुपार्श्वनाथ विधान

मंगलाचरण

भवपाशच्छिदे तुभ्यं, श्रीसुपार्श्व! नमो नमः।
संसृतिपार्श्वदूराय, मुक्तिपार्श्वविधायिने।।1।।

श्री सुपार्श्वनाथ स्तोत्रम्

(श्री समन्तभद्राचार्य विरचित)

–उपजाति छंद–

स्वास्थ्यं यदात्यन्तिक-मेष पुंसां, स्वार्थो न भोगःपरिभंगु-रात्मा।
तृषोऽनुषंगान्न च तापशांति-रितीद-माख्यद्-भगवान् सुपार्श्वः।।1।।

अजंगमं जंगम-नेययन्त्रं, यथा तथा जीवधृतं शरीरम्।
बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च, स्नेहो वृथा-त्रेति हितं त्वमाख्यः।।2।।

अलंघ्यशक्ति-र्भवितव्यतेयं, हेतुद्वया-विष्कृत-कार्यलिंगा।
अनीश्वरो जन्तु-रहं क्रियार्त्तः, संहत्य कार्ये-ष्विति साध्ववादीः।।3।।

बिभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो, नित्यं शिवं वांछति नास्य लाभः।
तथापि बालो भयकाम-वश्यो, वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः।।4।।

सर्वस्य तत्त्वस्य भवान् प्रमाता, मातेव बालस्य हिता-नुशास्ता।
गुणावलोकस्य जनस्य नेता, मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य।।5।।

पद्यानुवाद–(गणिनी ज्ञानमती)

–शेर छंद–

जीवों का है परिपूर्ण स्वास्थ्य स्व में स्थिती।
क्षणभंगुरे ये भोग नहिं निज के अर्थ ही।।
तृष्णा की वृद्धि से नहीं है ताप की शांती।
भगवन् ! सुपार्श्व आपने यह सूक्ति सिखा दी।।1।।

जिस विध से जड़ ये यंत्र सचेतन से चले हैं।
वैसे ही अचेतन शरीर जीव धरे हैं।।
यह तनु घृणित दुर्गंधि विनश्वर व तापकर।
इसमें है राग व्यर्थ ऐसा तव कथन हितकर।।2।।

ये होनहार है अलंघ्य टाले न टलती।
अन्तर व बाह्य हेतुओं से कार्य की सिद्धी।।
असमर्थ भी ये जीव अहंकार से ग्रसित।
सहकारि से ही कार्य न हों प्रभु कथन उचित।।3।।

यह जीव मृत्यु से डरे फिर भी नहीं मुक्ती।
नित मोक्ष की वांछा करे फिर भी न हो प्राप्ती।।
फिर भी ये अज्ञ जीव भय व कामवश हुआ।
स्वयमेव व्यर्थ है दुःखी प्रभु तुमने यह कहा।।4।।

प्रभु आप सब पदार्थ के ज्ञाता प्रसिद्ध हैं।
बालक के लिए हितकथन में मातु सदृश हैं।।
गुण खोजने वालों के नेता आप ही यहां।
प्रभु आज मैं भी तव स्तव भक्ती से कर रहा।।5।।

श्री सुपार्श्वनाथ स्तुति

–शंभु छंद–

प्रभु पास नहीं किंचित् संग है, अतएव राग का लेश नहीं।
आयुध के पास न होने से, प्रभु तुम में किंचित् द्वेष नहीं।।
तव वाणी दिव्या सत्य सुखद, अतएव दोष लवलेश नहीं।
तुमको प्रणमूँ सर्वज्ञ प्रभो ! जिन हे सुपार्श्व! जगवंद्य सही।।1।।

हरिताभ तनु फिर भी तनु से, विरहित अशरीरी सिद्ध तुम्हीं।
शिवरमणी में आसक्त सदा, फिर भी ब्रह्मचारी पूर्ण तुम्हीं।।
कर्मारि युद्ध में निर्दय हो, फिर भी करुणा के सागर हो।
सब छोड़ दिया फिर भी अपने, अगणित गुणनिधि रत्नाकर हो।।2।।

धनपति ने नगरि बनारस में, रत्नों की वर्षा वर्षायी।
पृथ्वी भी तृप्त हुई उस क्षण, पृथ्वीषेणा माँ हर्षायी।।
सित भादों षष्ठी को प्रभु ने, माता के गर्भ प्रवेश किया।
शुक्तापुट में मुक्ताफलवत् नहिं, माँ को किंचित् क्लेश हुआ।।3।।

शुभ ज्येष्ठ सुदी बारस प्रभु का, अभिषेक हुआ मंदर गिरि पर।
उस तिथि ही में जिनरूपधरा, धर ध्यान शस्त्र भी करुणाकर।।
फाल्गुन वदि षष्ठी को प्रभु के, घट में केवल रवि उदित हुआ।
फाल्गुन वदि सप्तमि मोक्ष बसे, सब कर्म नशे तम भाग गया।।4।।

अठ सौ कर तुंग शरीर प्रभो, मरकतमणि आभा धारी हो।
आयु है बीस लाख पूरब, इक्ष्वाकु वंश अवतारी हो।।
स्वस्तिक लांछन सुप्रतिष्ठ पिता, रत्नत्रय निधि के पूर्ण धनी।
प्रभु तव प्रसाद से पूर्ण ''ज्ञानमति', हो मुझको अर्हत् लक्ष्मी।।5।।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अर्हंत पूजा

स्थापना–गीता छंद

अरिहंत प्रभु ने घातिया को घात निज सुख पा लिया।
छ्यालीस गुण के नाथ अठरह दोष का सब क्षय किया।।
शत इंद्र नित पूजें उन्हें गणधर मुनी वंदन करें।
हम भी प्रभो! तुम अर्चना के हेतु अभिनन्दन करें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः हे अर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं अर्हन् नमः हे अर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं अर्हन् नमः हे अर्हत्परमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–बसन्ततिलका छंद–

श्रीमज्जिनेंद्र पद में जलधार देऊं।
आतंक पंक जग का सब दूर होवे।।
इच्छानुसार फलदायक कल्पतरू ये।
पूजा जिनेन्द्रप्रभु की त्रय ताप नाशे।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा। (जलं निर्वपामीति स्वाहा।)

काश्मीरि केशर सुचंदन को घिसाऊँ।
चर्चूं जिनेन्द्र पदपंकज में रुचि से।।
संसार के सकल ताप विनाश करती।
पूजा जिनेन्द्र प्रभु की सब सौख्य देती।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः परमात्मकेभ्यः चंदनं ... ।

जो कुंदपुष्प कलियों सम दीखते हैं।
धोये सु तंदुल लिये भर थाल में हैं।।
अर्हंत सन्मुख रखूँ बहु पुंज नीके।
पाथेय मोक्षपथ में जन के लिये हो।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनादिनिधनेभ्यः अक्षतं ... ।

मल्ली गुलाब वर पुष्प सुगंधि करते।
अर्हंत के चरण में रुचि से चढ़ाऊँ।।
पापान्धकूप मधि डूब रहे जनों को।
उद्धार हेतु जिनपूजन ही जगत् में।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः सर्वनृसुरासुरपूजितेभ्यः पुष्पं ... ।

शालीय ओदन सुगंधित भोज्यवस्तू।
पीयूष तुल्य चरु लेकर थाल भरके।।
अर्हंत सन्मुख चढ़ा क्षुध व्याधि नाशूँ।
तृप्ती अनंत जिनपूजन से मिलेगी।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनंतज्ञानेभ्यः नैवेद्यं ... ।

जो चित्त का तमसमूह विनाश करके।
त्रैलोक्यगेह वर दीपक दीप ज्योति।।
ले दीप आरति करूँ वरज्ञानज्योति।
पाऊँ अनंत निजज्ञान विकास करके।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनंतदर्शनेभ्यः दीपं ... ।

जो धूप सुन्दर सुगंध बिखेरती है।
अग्नी विषे जलत धूम्र उड़ावती है।।
खेऊँ दशांगवर धूप जिनेन्द्र आगे।
संपूर्ण पाप जलते वर सौख्य होगा।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनंतवीर्येभ्यः धूपं ... ।

ये कल्पवृक्ष फल सम अति मिष्ट ताजे।
अमृत समान रस से परिपूर्ण दीखें।।
पूजा करूँ फल चढ़ाकर आपकी मैं।
स्वात्मैक सिद्धि फल प्राप्त करूँ इसी से।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः अनंतसौख्येभ्यः फलं ... ।

नीरादि आठ वर द्रव्य संजोय करके।
घंटा ध्वजा चंवर छत्र सुदर्पणादी।।
मांगल्य द्रव्य शुभ लेकर पूजते ही।
संपूर्ण मंगल मिले निज सौख्य पाऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः परममंगलेभ्यः अर्घ्यं ... ।

श्रीपूज्यपाद जिन के चरणाब्ज नमते।
संपूर्ण इंद्र शिर से अतिभक्ति भावे।।
श्री पूज्य के पदनिकट जलधार देते।
हो शांति लोक त्रय में मुझ भक्त को भी।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः स्वस्ति भद्रं भवतु जगतां शांतये शांतिधारां निष्पादयामि शांतिकृद्भ्यः स्वाहा।

(शांतिधारा करें)

जो इन्द्र भक्ति वश नेत्र हजार करके।
बाहू हजार कर तांडव नृत्य करता।।
ऐसे जिनेन्द्रपद पुष्प चढ़ाय करके।
पूजा त्रिकाल कर अनुपम सौख्य पाऊँ।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हन् नमः ध्यातृभिः अभीप्सितफलदेभ्यः स्वाहा।

(पुष्पांजलि चढ़ावें)

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं अर्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।

जयमाला

–दोहा–

श्री अरिहंत जिनेन्द्र का, धरूँ हृदय में ध्यान।
गाऊँ गुणमणिमालिका, हरूँ सकल अपध्यान।।1।।

–शम्भु छंद–

जय जय प्रभु तीर्थंकर जिनवर, तुम समवसरण में राज रहे।
जय जय अर्हंत् लक्ष्मी पाकर, निज आत्मा में ही आप रहे।।

जन्मत ही दश अतिशय होते, तन में न पसेव न मल आदी।
पयसम सित रुधिर सु समचतुष्क, संस्थान संहनन है आदी।।1।।

अतिशय सुरूप, सुरभित तनु हैं, शुभ लक्षण सहस आठ सौ हैं।
अतुलित बल प्रियहित वचन प्रभो, ये दश अतिशय जन मन मोहें।।
केवल रवि प्रगटित होते ही, दश अतिशय अद्भुत ही मानों।
चारों दिश इक-इक योजन तक, सुभिक्ष रहे यह सरधानो।।2।।

हो गगन गमन नहिं प्राणीवध, नहिं भोजन नहिं उपसर्ग तुम्हें।
चउमुख दीखें सब विद्यापति, नहिं छाया नहिं टिमकार तुम्हें।।
नहिं नख औ केश बढ़े प्रभु के, ये दश अतिशय सुखकारी हैं।
सुरकृत चौदह अतिशय मनहर, जो भव्यों को हितकारी हैं।।3।।

सर्वार्ध मागधीया भाषा, सब प्राणी मैत्री भाव धरें।
सब ऋतु के फल औ फूल खिलें, दर्पणवत् भूरत्नाभ धरें।।
अनुकूल सुगंधित पवन चले, सब जन मन परमानंद भरें।
रजकंटक विरहित भूमि स्वच्छ, गंधोदक वृष्टी देव करें।।4।।

प्रभु पद तल कमल खिलें सुन्दर, शाली आदिक बहु धान्य फलें।
निर्मल आकाश दिशा निर्मल, सुरगण मिल जय जयकार करें।।
अरिहंत देव का श्रीविहार, वर धर्मचक्र चलता आगे।
वसु मंगल द्रव्य रहें आगे, यह विभव मिला जग के त्यागे।।5।।

तरुवर अशोक सुरपुष्प वृष्टि, दिव्यध्वनि चौंसठ चमर कहें।
सिंहासन भामंडल सुरकृत, दुंदुभि छत्रत्रय शोभ रहें।।
ये प्रातिहार्य हैं आठ कहे, औ दर्शन ज्ञान सौख्य वीरज।
ये चार अनंत चतुष्टय हैं, सब मिलकर छ्यालिस गुण कीरत।।6।।

क्षुध तृषा जन्म मरणादि दोष, अठदश विरहित निर्दोष हुए।
चउ घाति घात नवलब्धि पाय, सर्वज्ञ प्रभू सुखपोष हुए।।
द्वादशगण के भवि असंख्यात, तुम धुनि सुन हर्षित होते हैं।
सम्यक्त्व सलिल को पाकर के, भव भव के कलिमल धोते हैं।।7।।

मैं भी भवदुःख से घबड़ा कर, अब आप शरण में आया हूँ।
सम्यक्त्व रतन नहिं लुट जावे, बस यही प्रार्थना लाया हूँ।।
संयम की हो पूर्ती भगवन्! औ मरण समाधी पूर्वक हो।
हो केवल 'ज्ञानमती' सिद्धी, जो सर्व गुणों की पूरक हो।।8।।

ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं अर्हत्परमेष्ठिभ्यः जयमाला महार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

–दोहा–

मोह अरी को हन हुए, त्रिभुवन पूजा योग्य।
नमो नमो अरिहंत को, पाऊँ सौख्य मनोज्ञ।।1।।

।इत्याशीर्वादः।

तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ जिनपूजा

–अथ स्थापना –नरेन्द्रछंद –

श्री सुपार्श्व के चरण कमल में, गणधर गुरु शिर नाते।
मुनिगण स्वात्म रसास्वादी भी, मन मंदिर में ध्याते।।
सप्तम तीर्थंकर मरकतमणि, आभा से अतिसुंदर।
आह्वानन कर जजूँ आपको, नमते तुम्हें पुरंदर।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकर! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकर! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकर! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टकं-चाल-नंदीश्वर पूजा –

सीतानदि शीतल नीर, प्रभुपद धार करूँ।
मिट जाये भव भव पीर, आतम शुद्ध करूँ।।
भगवन् ! सुपार्श्व जिनराज, मेरी अर्ज सुनो।
दे दीजे निज साम्राज्य, मैं तुम चरण नमो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि गंध सुगंध, प्रभु चरणों चर्चूं।
मिल जावे आत्म सुगंध, स्वारथवश अर्चूं।।भगवन्..।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कौमुदी शालि के पुंज, नाथ चढ़ाऊँ मैं।
निज आतम सौख्य अखंड, अर्चत पाऊँ मैं।।भगवन्..।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपा वकुलादि गुलाब, पुष्प चढ़ाऊँ मैं।
प्रभु मिले आत्म गुण लाभ, आप रिझाऊँ मैं।।भगवन्..।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लाडू पेड़ा पकवान, नाथ! चढ़ाऊँ मैं।
कर क्षुधावेदनी हान, निज सुख पाऊँ मैं।।
भगवन् ! सुपार्श्व जिनराज, मेरी अर्ज सुनो।
दे दीजे निज साम्राज्य, मैं तुम चरण नमो।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति अखंड, आरति करते ही।
मिल जाये ज्योति अमंद, निजगुण चमके ही।।भगवन्..।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वरधूप अग्नि में खेय, सुरभि उड़ाऊँ मैं।
प्रभु पद पंकज को सेय, समसुख पाऊँ मैं।।भगवन्..।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला एला बादाम, फल से पूजूँ मैं।
पाऊँ निज में विश्राम, भव से छूटूँ मैं।।भगवन्..।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु अर्घ्य रजत के पुष्प, थाल भराय लिया।
परिपूर्ण 'ज्ञानमति' हेतु, आप चढ़ाय दिया।।भगवन्..।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा –

नाथ! पाद पंकेज, जल से त्रयधारा करूँ।
अतिशय शांतीहेत, शांतीधारा विश्व में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार गुलाब, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।
मिले आत्म सुखलाभ, जिनपद पंकज पूजते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

पंचकल्याणक अर्घ्य

–नरेन्द्र छंद –

प्रभु मध्यम ग्रैवेयक तजकर, वाराणसि में आये।
सुप्रतिष्ठ पितु माता पृथ्वी-षेणा गर्भ में आये।।
भादों सुदि छठ तिथी श्रेष्ठ में, इन्द्र महोत्सव कीना।
गर्भकल्याणक पूजा करते, हमने समकित लीना।।1।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लाषष्ठ्यां श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकरगर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्येष्ठ सुदी बारस में जन्मे, सुरपति आसन कंपे।
देवगृहों में सबविध बाजे, स्वयं स्वयं बज उठते।।
जन्म न्हवन उत्सव विधिपूर्वक, किया इन्द्र सुरगण ने।
जन्मकल्याणक पूजा करते, परमानंद हो क्षण में।।2।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकरजन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋतु परिवर्तन देख विरक्ती, ज्येष्ठ सुदी बारस में।
मनोगती पालकि सुर लाये, प्रभु बैठे उस क्षण में।।
इन्द्र सहेतुक वन में पहुँचे, प्रभु ने केश उखाड़े।
नमः सिद्ध कह दीक्षा धारी, पूजत कर्म पछाड़े।।3।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकरदीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन वदि छठ सायं प्रभु ने, घाति विनाश किया था।
बाग सहेतुक तरु शिरीष तल, केवलज्ञान हुआ था।।
इन्द्र सातविध सुरसेना सह, आये समवसरण में।
ज्ञान कल्याणक पूजा करते, ज्ञान ज्योति हो क्षण में।।4।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाषष्ठ्यां श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकरकेवलज्ञानकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन वदि सप्तमी प्रभाते, गिरि सम्मेद शिखर से।
मुक्तिनगर में वास किया था, एक हजार मुनी ले।।
काल अनंतानंत वहीं पे, सुस्थिर हो तिष्ठेंगे।
जिनसुपार्श्व की पूजा करते, कर्ममेघ विघटेंगे।।5।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णासप्तम्यां श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकरमोक्षकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य (दोहा) –

श्री सुपार्श्व तीर्थेश के, चरण कमल जगवंद्य।
पूर्ण अर्घ्य से नित जजूँ, सुख हो परमानंद।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकरपंचकल्याणकाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ 108 अर्घ्य

–दोहा –

सर्वास्रव से मुक्त हो, श्री सुपार्श्व जिनदेव।
पुष्पांजलि से मैं जजूँ, करूँ सतत तुम सेव।।1।।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(प्रथम वलय में 27 अर्घ्य)

अथ प्रथमवलये पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–शंभु छंद –

मन वचन काय त्रय योग कहे, संमरंभ समारंभ आरंभा।
कृत कारित अनुमति चउकषाय, इनको आपस में गुणितांता।।
सब इक सौ आठ भेद होते, जो क्रोध करे मन संरंभ से।
इस रहित सुपार्श्वनाथ पूजूँ, मेरा मन क्रोध सभी विनशे।।1।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो पर से मन संरंभ क्रोध, करवाता कर्मास्रव करता।
इनसे विरहित तीर्थंकर की, अर्चा से पापास्रव टलता।।

परमानंदामृत के इच्छुक, योगी भी जिन को ध्याते हैं।
श्रीसुपार्श्वनाथ की पूजा कर, दुख दारिद्र दूर भगाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन से संरंभ क्रोधपूर्वक, उसका अनुमोदन जो करते।
उनके पापास्रव होते हैं, प्रभु पूजा से ही टल सकते।।
परमानंदामृत के इच्छुक, योगी भी जिन को ध्याते हैं।
उन सुपार्श्वनाथ की पूजा कर, दुख दारिद्र दूर भगाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो क्रोधित मन से समारंभ, करके पापास्रव करते हैं।
प्रभु सिद्धों के गुण गाते ही, सब अशुभ कर्म भी झड़ते हैं।।
परमानंदामृत के इच्छुक, योगी भी जिन को ध्याते हैं।
उन सुपार्श्वजिन की पूजा कर, दुख दारिद्र दूर भगाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो क्रोधित मन से समारंभ, करवाते पापास्रव करते।
प्रभु भक्ती से वे बंधे कर्म, फल दिये बिना भी झड़ सकते।।
परमानंदामृत के इच्छुक, योगी भी जिन को ध्याते हैं।
उन सुपार्श्व प्रभु की पूजा कर, दुख दारिद्र दूर भगाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो क्रोधित मन से समारंभ, करने वाले को अनुमति दें।
उनके जो कर्म बंधे वे भी, जिन भक्ती से फल नहिं भी दें।।
परमानंदामृत के इच्छुक, योगी भी जिन को ध्याते हैं।
उन सुपार्श्व प्रभु की पूजा कर, दुख दारिद्र दूर भगाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित मन से आरंभ करें, मनकृत आरंभ क्रोधधारी।
ये कर्मबंध भव भव दुखप्रद, इन कर्मों से ही संसारी।।
परमानंदामृत के इच्छुक, योगी भी जिन को ध्याते हैं।
उन सुपार्श्व प्रभु की पूजा कर, दुख दारिद्र दूर भगाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतमनः-आरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित मन से आरंभ करे, उसको जो प्रेरित करते हैं।
वे पाप बंध कर जन्म मरण, दुःखों को भरते रहते हैं।।
परमानंदामृत के इच्छुक, योगी भी जिन को ध्याते हैं।
उन सुपार्श्व प्रभु की पूजा कर, दुख दारिद्र दूर भगाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितमनः-आरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित मन हो आरंभ करे, उसको जो अनुमति देते हैं।
वे गर्भवास के दुःख सहें, नाना संकट भर लेते हैं।।
परमानंदामृत के इच्छुक, योगी भी जिन को ध्याते हैं।
उन सुपार्श्व प्रभु की पूजा कर, दुख दारिद्र दूर भगाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतमनः-आरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चौपाई छंद –

मान करे मन से संरंभ। पाप कर्म का करता बंध।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। नमूँ परम आनंद निधान।।10।।

ॐ ह्रीं मानकृतमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित जो मन संरंभ। उसे कराके कर्म निबंध।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। जजूँ परम आनंद निधान।।11।।

ॐ ह्रीं मानकारितमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानसंरंभ मानयुत कहा। अनुमति देकर हर्षित रहा।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। नमूँ परम आनंद निधान।।12।।

ॐ ह्रीं मानानुमतमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानसहित मन का व्यापार। समारंभ यह दुख दातार।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। जजूँ परम आनंद निधान।।13।।

ॐ ह्रीं मानकृतमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानसहित मन का व्यापार। करवाता जो मूढ़ अपार।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। नमूँ परम आनंद निधान।।14।।

ॐ ह्रीं मानकारितमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समारंभ जो मान समेत। अनुमोदें आतमदुख हेत।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। जजूँ परम आनंद निधान।।15।।

ॐ ह्रीं मानानुमतमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित मन से आरंभ। कार्य करे जो दुख का फंद।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। नमूँ परम आनंद निधान।।16।।

ॐ ह्रीं मानकृतमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित मन से आरंभ। करवाते वे पाप प्रबंध।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। जजूँ परम आनंद निधान।।17।।

ॐ ह्रीं मानकारितमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित मन से आरंभ। अनुमति दे हो आस्रव बंध।।
इन विरहित सुपार्श्व भगवान। नमूँ परम आनंद निधान।।18।।

ॐ ह्रीं मानानुमतमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पद्धड़ी छंद –

माया युत मन संरंभ जान। तिर्यंच गती का है निदान।।
इनसे विरहित सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।19।।

ॐ ह्रीं मायाकृतमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत मन संरंभ होय। जो करवाते नित मुदित होय।।
इनसे विरहित सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।20।।

ॐ ह्रीं मायाकारितमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुतमन संरंभ लीन। अनुमति देते वे सौख्य हीन।।
इनसे विरहित सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।21।।

ॐ ह्रीं मायानुमतमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत मन का समारंभ। जो स्वयं करें वे भव भ्रमंत।।
इनसे विरहित सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।22।।

ॐ ह्रीं मायाकृतमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया से मन का समारंभ। जो करवाते वे करें बंध।।
इनसे विरहित श्री सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।23।।

ॐ ह्रीं मायाकारितमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया से मन का समारंभ। जो पर को अनुमति दे अनंद।।
इनसे विरहित सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।24।।

ॐ ह्रीं मायानुमतमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत मन आरंभ लीन। जो स्वयं करें वे स्वात्महीन।।
इनसे विरहित सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।25।।

ॐ ह्रीं मायाकृतमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत मन आरंभ लीन। करवाते जो वे सौख्यहीन।।
इनसे विरहित सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।26।।

ॐ ह्रीं मायाकारितमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायायुत मन आरंभ होय। उसको अनुमति दे बंध होय।।
इनसे विरहित सुपार्श्व देव। मैं जजूँ करूँ तुम चरण सेव।।27।।

ॐ ह्रीं मायानुमतमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा –

परम अतीन्द्रिय ज्ञानसुख, वीर्य दर्श गुणवान्।
आस्रव रहित सुपार्श्व को, नमूँ नमूँ सुखदान।।1।।

ॐ ह्रीं क्रोधमानमायारंभादि-आस्रवरहिताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

(द्वितीय वलय में 27 अर्घ्य)

–दोहा –

परम शुद्ध परिणाम हित, तुम पद पूजूँ आज।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, भरो आश जिनराज।।1।।

अथ द्वितीयवलये पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–दोहा –

लोभ सहित मन से करें, जो संरंभ महान।
पाप बंधे इनसे रहित, नमूँ सुपार्श्व भगवान।।28।।

ॐ ह्रीं लोभकृतमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभचित्त संरंभ को, जो करवाते जीव।
पाप बंधे इनसे रहित, नमूँ सुपार्श्व सुख नींव।।29।।

ॐ ह्रीं लोभकारितमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुमोदें जो लोभ युत, मन संरंभ करंत।
इन विरहित अर्हंत को, जजत मिले भव अंत।।30।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतमनःसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ सहित मन से करें, समारंभ जो जीव।
पापास्रव करते सतत, नमतें हों दुख छीव।।31।।

ॐ ह्रीं लोभकृतमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ सहित मन से करें, समारंभ नरवृंद।
करवाते वे मूढ़जन, नमूँ सुपार्श्व सुखकंद।।32।।

ॐ ह्रीं लोभकारितमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभसहित मन से करें, समारंभ जो कोय।
अनुमोदें उनसे रहित, जजूँ सुपार्श्व सुख होय।।33।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतमनःसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभचित्त आरंभ जो, करें पाप में लीन।
उनसे रहित सुपार्श्व को, नमूँ स्वात्म सुख लीन।।34।।

ॐ ह्रीं लोभकृतमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभचित्त आरंभयुत, करवाते जो पाप।
उनसे रहित अर्हंत को, नमत बनूँ निष्पाप।।35।।

ॐ ह्रीं लोभकारितमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ चित्त आरंभयुत, अनुमोदें जो नित्य।
कर्म बांधते उन रहित, नमूँ सुपार्श्व गुण नित्य।।36।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतमनःआरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–स्रग्विणी छंद –

क्रोध में वाक्य से कार्य की भूमिका।
नाम संरंभ है जो करें सर्वदा।।
पाप को बांधते चारगति में भ्रमें।
आपने नाशिया मैं जजूँ अर्घ्य ले।।37।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध में वचन से जो कराते सदा।
नाम संरंभ है कार्य की भूमिका।।
कर्म आते इन्हें आपने नाशिया।
मैं जजूँ अर्घ्य ले ज्ञान सम्यक् किया।।38।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध से वचन संरंभ में अनुमती।
सर्व प्राणी इसी से लहें दुर्गती।।
आपने नाश के पाई पंचमगती।
मैं नमूँ मैं नमूँ पाऊं सम्यक्मती।।39।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध से वच समारंभ जो आचरें।
कार्य को सर्व वस्तू इकट्ठी करें।।
ये समारंभ कर्मारि का मित्र है।
आपने नाशिया आप ही शर्ण हैं।।40।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध में वचन से जो समारंभ हो।
जो करावें इसे कर्म बांधें अहो।।

आप ही नाथ हो आज रक्षा करो।
अर्घ्य लेके जजूँ मम सुरक्षा करो।।41।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध से वचन व्यापार में अनुमती।
जो करें सो भ्रमें तीन जग में दुखी।।
आप जगवंद्य हो नाथ! रक्षा करो।
मैं जजूँ अर्घ्य ले मम सुरक्षा करो।।42।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध में वचन से कार्य को आरभे।
नाम आरंभ कृत कर्म को बांधते।।
आप आरंभ को त्याग परमातमा।
मैं जजूँ आपको होऊं शुद्धातमा।।43।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतवचनारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्य आरंभते को करे प्रेरणा।
क्रोध से वचन से पाप बांधे घना।।
जो तजे दोष को वे हि शुद्धातमा।
मैं जजूँ प्राप्त कर लूँ स्व परमातमा।।44।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितवचनारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्य आरंभते को अनूमोदते।
क्रोध में वचन से कर्म को बांधते।।
आप प्रभु घातिया कर्म से शून्य हो।
मैं जजूँ कर्मवैरी स्वयं चूर हों।।45।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतवचनारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानकृत वचन संरंभ से पाप हो।
सो जगत में भ्रमें दुःख संताप हो।।
सर्व संरंभ से मुक्त परमात्मा।
मैं जजूँ साम्यपीयूष पाऊं यहाँ।।46।।

ॐ ह्रीं मानकृतवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान से वचन से कार्य की भूमिका।
जो कराता सभी लोक में घूमता।।
आपने नाश के स्वात्मसंपद लिया।
मैं जजूँ आपको शुद्ध सम्यक् लिया।।47।।

ॐ ह्रीं मानकारितवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान से वचन से कार्य संरंभ में।
जो अनूमोदता दुःख भोगें भ्रमें।।
आप सिद्धातमा मैं जजूँ भक्ति से।
ज्ञानज्योती मिले स्वात्मसंपत्ति से।।48।।

ॐ ह्रीं मानानुमतवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान से वचन से जो समारंभ हो।
कार्य हेतू सभी वस्तु एकत्र हो।।
नाश के सिद्ध भगवान होते यहाँ।
मैं जजूँ स्वात्म पीयूष पीऊं यहाँ।।49।।

ॐ ह्रीं मानकृतवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो कराते समारंभ नित मान से।
वाक्य से प्रेरते जीव दुख पावते।।

तीर्थकर्ता सभी कर्म से दूर हैं।
मैं जजूँ सौख्य पाऊँ जो भरपूर है।।50।।

ॐ ह्रीं मानकारितवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो समारंभ करते वचन मान से।
दें अनूमोदना कर्म को बांधते।।
आप सर्वज्ञ को मैं नमूँ भाव से।
भेद विज्ञान पाऊं निजी चाव से।।51।।

ॐ ह्रीं मानानुमतवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान से वचन से कार्य जो आरभें।
नित्य आरंभ से जीव हिंसा करें।।
आपने सर्व आरंभ परिग्रह तजा।
मैं जजूँ भक्ति से प्राप्त हो मुक्तिजा।।52।।

ॐ ह्रीं मानकृतवचन-आरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान से वचन से कार्य आरंभ में।
जो करें प्रेरणा कर्म बांधें घने।।
मुक्ति हेतू धरा ध्यान मैं पूजहूँ।
रोग शोकादि दारिद्र से छूटहूँ।।53।।

ॐ ह्रीं मानकारितवचन-आरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्य आरंभते को करे अनुमती।
मान में वाक्य से वे धरें दुर्गती।।
आपको पूजते सर्व संकट टलें।
मैं स्वयं मैं स्वयं आन संपत् मिलें।।54।।

ॐ ह्रीं मानानुमतवचन-आरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा –

पंचमगति के हेतु मैं, नमन करूँ पंचांग।
परमानंद अमृत अतुल, सौख्य भरो सर्वांग।।1।।

ॐ ह्रीं सर्वास्रवविरहिताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

(तृतीय वलय में 27 अर्घ्य)

–दोहा –

चिंतित फल देवें सदा, चिंतामणि चिद्रूप।
पुष्पांजलि से पूजते, भक्त बने शिवरूप।।1।।

अथ तृतीयवलये पुष्पांजलिं क्षिपेत्

–शेरछंद –

माया से वचन से स्वयं संरंभ जो करें।
जो कार्य को करने में भूमिका को विस्तरें।।
ये पापहेतु लाखों योनियों में भ्रमावें।
जो नाथ की पूजा करें निज संपदा पावें।।55।।

ॐ ह्रीं मायाकृतवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो छद्म से वच से सदा संरंभ कराते।
वे भी करम से सर्व जग में निज को भ्रमाते।।
तीर्थेश के गुणों की अर्चना प्रधान है।
जो पूजते वे भी बनें जग में महान हैं।।56।।

ॐ ह्रीं मायाकारितवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया सहित वचन से जो संरंभ को करें।
उनकी करें अनुमोदना वे पाप को भरें।।

जिनवर की वंदना से सर्व दुःख दूर हों।
निज आत्म की अनुभूति से पीयूष पूर हो।।57।।

ॐ ह्रीं मायानुमतवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया से वचन से जो समारंभ को करें।
चौरासी लाख योनियों में जन्म वे धरें।।
यदि जन्मसिंधु से तुम्हें तिरने की है इच्छा।
जिनवर की अर्चना करो मानो गुरु शिक्षा।।58।।

ॐ ह्रीं मायाकृतवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया से वाक्य से जो समारंभ कराते।
चारों गती के दुख जलधि में निज को डुबाते।।
ये भूत प्रेत डाकिनी शाकिनि पिशाचिनी।
सब दूर हों जिनभक्ति से बाधाएं भी घनी।।59।।

ॐ ह्रीं मायाकारितवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया से वचन से जो समारंभ को करें।
अनुमोदते उन्हें वे पशू योनि को धरें।।
जो इनसे मुक्त हो चुके त्रिभुवन ललाम हैं।
उनको अनंत बार ही मेरा प्रणाम है।।60।।

ॐ ह्रीं मायानुमतवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो छद्म से वचन से आरंभ नित करें।
ये कार्य को प्रारंभ करते हर्ष मन धरें।।
इनके अशुभ प्रकृती बंधे दुर्गति में जा पड़ें।
जो इनसे मुक्त उन प्रभू के चरण हम पड़ें।।61।।

ॐ ह्रीं मायाकृतवचनारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया से वचन से सदा आरंभ कराते।
वे निज को और पर को तीन जग में भ्रमाते।।
जो इनसे मुक्त हैं उन्हों की वंदना करूँ।
निर्मूल हो माया कषाय, प्रार्थना करूँ।।62।।

ॐ ह्रीं मायाकारितवचनारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आरंभ में अनुमोदना माया से वचन से।
तब कर्मशत्रु आवते रोके नहीं रुकते।।
इनसे विमुक्त समवसरण कमल पे रहें।
माया को जो तजें स्वयं ऊरधगती लहें।।63।।

ॐ ह्रीं मायानुमतवचनारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभ से वच से सदा संरंभ को करें।
वे आत्मशुद्धि ना करें जग में भ्रमण करें।।
प्रभु आपने इसको तजा निजधाम पा लिया।
मैं दुख से ऊब के ही आपकी शरण लिया।।64।।

ॐ ह्रीं लोभकृतवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभ से वच से सदा संरंभ कराते।
वे भावशुद्धि के बिना निर्धन सदा रहते।।
इसको तजे से तीन लोक संपदा मिली।
मैं भी तुम्हें पूजूँ समस्त आपदा टलीं।।65।।

ॐ ह्रीं लोभकारितवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संरंभ लोभ से वचन से उसमें अनुमती।
ये बुद्धि सबमें काल अनादी से ही रहती।।
प्रभु इनसे मुक्त आपके गुणों की अर्चना।
जो भक्त हैं वे कर सकेंगे यम की तर्जना।।66।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतवचनसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वच से व लोभ से जो समारंभ कर रहे।
वे मोहनीय कर्मबंध दृढ़ ही कर रहे।।
इनसे विमुक्त आप पाद वंदना भली।
प्रभु भक्त के मन कंज की कलियाँ तुरत खिलीं।।67।।

ॐ ह्रीं लोभकृतवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभ से वचन से समारंभ कराते।
वे भेदज्ञान शून्य हैं निज शुद्धि न पाते।।
इनसे विमुक्त नाथ की जो वंदना करें।
वे सब कषाय शत्रुओं की खंडना करें।।68।।

ॐ ह्रीं लोभकारितवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वच लोभ से जो समारंभ उसमें अनुमती।
वे तनु की व्याधियों से दुखी जग में दुर्मती।।
इनसे विमुक्त नाथ के गुणों की अर्चना।
संसारवार्धि से तिरूँ हो दुःख रंच ना।।69।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतवचनसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभ से वचन से भी आरंभ कर रहे।
वे छह निकाय जीव की हिंसा ही कर रहे।।
इनसे विमुक्त तीर्थनाथ की महापूजा।
ये सर्वसौख्यकारिणी इस सम नहीं दूजा।।70।।

ॐ ह्रीं लोभकृतवचन-आरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभ में वचन से भी आरंभ कराते।
वे पापपुंज बांधते निज ज्ञान न पाते।।
इनसे विमुक्त तीर्थपती की उपासना।
जो कर रहे वे पायेंगे शिवपथ की साधना।।71।।

ॐ ह्रीं लोभकारितवचनारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आरंभ लोभ से वचन से उसमें अनुमती।
परिग्रह से ही आरंभ उससे होवे दुर्गती।।
इनसे विमुक्त नाथ की मैं वंदना करूँ।
संपूर्ण दुःख से बचूँ सिध्यंगना वरूँ।।72।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतवचनारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्र छंद –

क्रोध सहित तन से कार्यों की बने रूपरेखा जो।
सो संरंभ कहाता श्रुत में इनसे मुक्त हुये जो।।
उन सुपार्श्व प्रभु के चरणों में नित प्रति शीश नमाऊँ।
गर्भवास के दुःख मिटाकर निज समरस सुख पाऊँ।।73।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध सहित तन से कार्यों को करवाने की रुचि से।
पाप कमाते सब संसारी पंच परावृत करते।।
इनसे मुक्त हुये जिनवर को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।74।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध सहित तन से कुछ करना करे भूमिका कोई।
अनुमति देकर पाप बढ़ाते महामूढ़ जन सो ही।।
इनसे मुक्त हुये जिनवर को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।75।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध सहित तन से कार्यों की सामग्री को जोड़े।
समारंभ यह नरक निगोदों में ले जाकर छोड़े।।

इनसे मुक्त हुये जिनवर को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।76।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्य हेतु पर से सामग्री एकत्रित करवाता।
क्रोध करे तन से जो फिर भी नहीं किसी से नाता।।
इनसे मुक्त हुये जिनवर को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।77।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध सहित तन से जो करते समारंभ दे अनुमति।
बिना हेतु ये पाप उपार्जे नहीं मिली है सन्मति।।
इनसे मुक्त हुये जिनवर को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।78।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध सहित तन से आरंभे पाँच पाप आदिक जो।
पाँच परावर्तन कर करके जग में भ्रमण करें वो।।
इनसे मुक्त हुये जिनवर को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।79।।

ॐ ह्रीं क्रोधकृतकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध करावे काय क्रिया से बहु आरंभ कराता।
तन की व्याधि करोड़ों भोगे कभी न पावे साता।।
इनसे मुक्त हुये जिनवर को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।80।।

ॐ ह्रीं क्रोधकारितकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध सहित काया से अनुमति देता आरंभी को।
नाना काय धरे मर मर कर भव भव में दुःखी हो।।
इनसे मुक्त हुये जिनवर को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।81।।

ॐ ह्रीं क्रोधानुमतकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा –

समवसरणपति देव, अखिल अमंगल को हरें।
नित्य करूँ मैं सेव, नित नव नव मंगल भरें।।1।।

ॐ ह्रीं सर्वास्रवविरहिताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

(चतुर्थ वलय में 27 अर्घ्य)

दोहा – **धर्मचक्र के अधिपती, त्रिभुवन पति जिनराज।**
सुमन चढ़ाकर पूजहूँ, नमूँ नमूँ नत माथ।।1।।

अथ चतुर्थवलये पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

मान सहित काया से जो संरंभ करे नित रुचि से।
नीच गोत्र में जन्म धरे फिर दुःख सहे नित तन से।।
इनसे विरहित श्रीसुपार्श्व को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।82।।

ॐ ह्रीं मानकृतकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित काया से कराता जो संरंभ सदा ही।
देवगती में भी यदि जन्में कुत्सित गती धरे ही।।
इनसे विरहित तीर्थेश प्रभु को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।83।।

ॐ ह्रीं मानकारितकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान से काया से संरंभे, उसको अनुमति देवे।
पाप पुण्य का आस्रव करके, दुःख निकट कर लेवे।।
इनसे विरहित तीर्थेश प्रभु को, कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों, सर्व कषाय शमन हों।।84।।

ॐ ह्रीं मानानुमतकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मद से तन से समारंभ कर, कर्मों को नित बांधे।
मानस शारीरिक आगंतुक सभी दुःखों को साधे।।
इनसे विरहित तीर्थेश प्रभु को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।85।।

ॐ ह्रीं मानकृतकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मद से तन से समारंभ जो सदा कराता रहता।
इहभव में परभव में भी तो दुख संकट बहु सहता।।
इनसे विरहित तीर्थेश प्रभु को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।86।।

ॐ ह्रीं मानकारितकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान से तन से समारंभ, करते को अनुमति देवे।
जन्म मरण के दुख सह-सहकर, बीज पाप का बोवे।।
इनसे विरहित तीर्थेश प्रभु को, कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों, सर्व कषाय शमन हों।।87।।

ॐ ह्रीं मानानुमतकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान सहित तन से कार्यों को, आरंभे भव भव में।
संस्कारों से तनु धर-धर कर भ्रमण करे चहुंगति में।।

इनसे विरहित तीर्थेश प्रभु को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।88।।

ॐ ह्रीं मानकृतकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मद से तन से सदा कराता पर से आरंभों को।
कुगुरु कुशास्त्रों की शिक्षा से कुत्सित बुद्धि धरे जो।।
इनसे विरहित तीर्थेश प्रभु को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।89।।

ॐ ह्रीं मानकारितकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मद से काया से आरंभित कार्यों को अनुमोदे।
नाना कर्मों को नित बांधे निज पर को भी दुख दे।।
इनसे विरहित तीर्थेश प्रभु को कोटी-कोटि नमन हो।
पंचेन्द्रिय के विषय दूर हों सर्व कषाय शमन हों।।90।।

ॐ ह्रीं मानानुमतकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद –

माया से तनु से जो सदा संरंभ करते प्रेम से।
वे कर्मबंधन से बंधे बहु दुःख सहते देह से।।
आस्रव रहित तीर्थेश प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।91।।

ॐ ह्रीं मायाकृतकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया से तनु से जो कराते हैं सदा संरंभ को।
तिर्यंच योनी में पड़ें वहाँ कष्ट दुःख असंख्य हो।।
आस्रव रहित तीर्थेश प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।92।।

ॐ ह्रीं मायाकारितकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो छद्म से तन से करें संरंभ उसमें अनुमती।
वे मूढ़ भेदविज्ञान बिना नहिं पा सकेंगे सद्गती।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।93।।

ॐ ह्रीं मायानुमतकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया निमित तन से समारंभे इकट्ठी वस्तु हों।
सम्यक्त्व बिन समता नहीं पाते उठाते दुःख को।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।94।।

ॐ ह्रीं मायाकृतकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया से तनु से समारंभों को कराते प्रेम से।
चारित्र बिन संसार में दुःख भोगते हैं देह से।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।95।।

ॐ ह्रीं मायाकारितकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तनु से समारंभें उन्हें माया व तनु से अनुमती।
तप बिना कर्मास्रव न सूखें फिर धरें तिर्यग्गती।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।96।।

ॐ ह्रीं मायानुमतकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया धरें तन से करें आरंभ जो भव मूल है।
जिन भक्ति बिन भव में भ्रमें पावें न वो भव कूल है।।

आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।97।।

ॐ ह्रीं मायाकृतकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया सहित तनु से कराते बहुत ही आरंभ जो।
जिनशास्त्र के स्वाध्याय बिन साता न पाते रंच वो।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।98।।

ॐ ह्रीं मायाकारितकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायासहित तनु से करें आरंभ उसमें अनुमती।
दिग्वस्त्र गुरु की भक्ति बिन मिलती नहीं है शुभ मती।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।99।।

ॐ ह्रीं मायानुमतकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभ से तनु से करें संरंभ चहुँगति में भ्रमें।
नित करें खोटे देव की भक्ती न जिनवच में रमें।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।100।।

ॐ ह्रीं लोभकृतकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभ वश तनु से कराते अन्य से संरंभ को।
जिनदेव की भक्ती बिना पाते न सुख के मर्म को।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।101।।

ॐ ह्रीं लोभकारितकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संरंभ करते देख अनुमति दें तनू से लोभ से।
संसार में रुलते रहें नहिं छूटते भव रोग से।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।102।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतकायसंरंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभवश तन की क्रिया से समारंभी हो रहे।
जिनधर्म बिन खोटे गुरू के वचन से भव दुःख सहें।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।103।।

ॐ ह्रीं लोभकृतकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो समारंभी लोभवश तनु से करें पर प्रेरणा।
उनके चतुर्गति भ्रमण में निज आत्म सुख का लेश ना।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।104।।

ॐ ह्रीं लोभकारितकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुमोदते जो लोभवश तनु से समारंभी जना।
वे मोक्षपथ के बिना व्यंतर योनि में दुख लें घना।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।105।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतकायसमारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभ से तनु से करें आरंभ बहुविध प्रेम से।
नरकायु बांधें सागरों तक दुःख भोगें नर्क के।।

आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।106।।

ॐ ह्रीं लोभकृतकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो लोभवश तनु से कराते अन्य से आरंभ को।
वे भी निगोदों के दुखों को सहें पापारंभ सों।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।107।।

ॐ ह्रीं लोभकारितकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आरंभ करते देख तनु से लोभवश अनुमति करें।
वे भी कुमानुषयोनि में चिरकाल तक बहु दुख भरें।।
आस्रव रहित श्रीसुपार्श्व प्रभु की जो सदा पूजा करें।
वे पुनर्भव के दुःख से छूटें न फिर काया धरें।।108।।

ॐ ह्रीं लोभानुमतकायारंभमुक्ताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा –

धर्मतीर्थ के नाथ तुम, धर्म चक्रधर धीर।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय के, पाऊँ मैं भव तीर।।1।।

ॐ ह्रीं अष्टोत्तरशतास्रवविरहिताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—**ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय नमः।**

(सुगंधित पुष्प, लवंग या पीले चावल से 108 बार मंत्र जपें)

जयमाला

–शेरछंद –

देवाधिदेव श्रीजिनेंद्र देव हो तुम्हीं।
श्रीसुपार्श्व तीर्थनाथ सिद्ध हो तुम्हीं।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।1।।

रस गंध स्पर्श वर्ण से मैं शून्य ही रहा।
इस मोह कर्म से मेरा संबंध ना रहा।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।2।।

ये द्रव्य कर्म आत्मा से बद्ध नहीं हैं।
ये भावकर्म तो मुझे छूते भी नहीं हैं।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।3।।

मैं एक हूँ विशुद्ध ज्ञान दर्श स्वरूपी।
चैतन्य चमत्कार ज्योति पुंज अरूपी।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।4।।

परमार्थनय से मैं तो सदा शुद्ध कहाता।
ये भावना ही एक सर्वसिद्धि प्रदाता।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।5।।

व्यवहारनय से यद्यपी अशुद्ध हो रहा।
संसार पारावार में ही डूबता रहा।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।6।।

फिर भी तो मुझे आज मिले आप खिवैया।
निज हाथ का अवलंब दे भवपार करैया।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।7।।

प्रभु आठ वर्ष में ही स्वयं देशव्रती थे।
नहिं आपका कोई गुरू हो सकता सत्य ये।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।8।।

स्वयमेव सिद्धसाक्षि से दीक्षा प्रभू लिया।
तप करके घाति घात के कैवल प्रगट किया।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।9।।

पंचानवे बलदेव आदि गणधरा कहे।
त्रय लाख मुनी समवसरण में सदा रहे।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।10।।

मीनार्या गणिनी प्रधान आर्यिका कहीं।
त्रय लाख तीस सहस आर्यिकाएँ भी रहीं।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।11।।

थे तीन लाख श्रावक पण लाख श्राविका।
ये जैन धर्म तत्पर अणुव्रत के धारका।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।12।।

तनु तुंग आठ शतक हाथ हरित वर्ण की।
आयू प्रभू की बीस लाख पूर्व वर्ष थी।।

हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।13।।

हे नाथ! आप तीन लोक के गुरू कहे।
भक्तों को इच्छा के बिना सब सौख्य दे रहे।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।14।।

मैं आप कीर्ति सुनके आप पास में आया।
अब शीघ्र हरो जन्म व्याधि इससे सताया।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।15।।

हे दीनबंधु शीघ्र ही निज पास लीजिए।
इस ''ज्ञानमती'' को प्रभू कैवल्य कीजिए।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधी पाय मैं धनवान हो गया।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–शेर छंद –

जो श्रीसुपार्श्वनाथ का, विधान करेंगे।
वे नर व देव के सुखों को, प्राप्त करेंगे।।
फिर कर्मभूमि में जनम ले, साधु बनेंगे।
कैवल्य 'ज्ञानमती' से, ही सिद्ध बनेंगे।।1।।

।इत्याशीर्वादः।

बड़ी जयमाला

–दोहा –

तीर्थंकर जिनकेवली, आस्रव बंध विमुक्त।
गाऊँ तुम गुणमालिका, मोक्ष तत्त्व से युक्त।।1।।

–गीता छंद –

जय जय सुपार्श्व जिनेंद्र, तीर्थंकर प्रभू जिनकेवली।
अर्हंत परमेष्ठी सकल, आस्रवरहित जिनकेवली।।
इनकी करूँ मैं वंदना, कर जोड़ नाऊं शीश को।
इनकी करूँ मैं अर्चना, शत-शत झुकाऊँ शीश को।।2।।

साता करम ही आस्रवे, ईर्यापथास्रव नाम ही।
हो केवली के इक समय, झड़ जाय नहिं हो बंध भी।।
आस्रव कहा जो सांपरायिक, सर्व जीवों में यही।
ये कर्म आठों बांधता, इससे भ्रमण जग में सही।।3।।

ये तीव्र मंद व ज्ञात अरु अज्ञात भावों से कहा।
निज शक्ति के कम या अधिक, से भेद नाना ले रहा।।
मिथ्यात्व पण पण अविरती, पंद्रह प्रमाद त्रियोग हैं।
चारों कषायों से सहित, भावास्रवों के भेद हैं।।4।।

आठों करम में दर्श मोहनि, चरित मोहनि दो प्रमुख।
सम्यक्त्व औ चारित्र को, नाशें अतः ये दुःखप्रद।।
सम्यक्त्व दर्शन ज्ञान चारित्र, मोक्ष के कारण कहे।
अतएव दर्शनमोहनी, हेतू से हम बचना चहें।।5।।

जिनकेवली को रोग हो, आहार भी लेकर जियें।
श्रुत में कहा है मांस भक्षण, साधुगण निर्लज्ज हैं।।
जिनधर्म में कुछ गुण नहीं, सुर देवियाँ बलि मांगते।
इस विधि कहें जो मूढ़जन, वे दर्शमोहनि बांधते।।6।।

जो केवली श्रुत संघ को, जिनधर्म सुर को दोष दें।
वे मोहनी दर्शन अशुभ को, बांधकर दुःख भोगते।।
ये सब असत् अपवाद हैं, हे नाथ! मैं इनसे बचूँ।
सम्यक्त्व निधि रक्षित करूँ, हे नाथ! भव दुख से बचूँ।।7।।

क्रोधादि अशुभ कषाय का, उद्रेक जब अति तीव्र हो।
चारित्र मोहनि बंध हो, नहिं चरित धारण शक्ति हो।।
चारित्र मोह अनादि से, हे नाथ! निर्बल कर रहा।
मेरी अनंती आत्म शक्ती, छीनकर दुःख दे रहा।।8।।

करके कृपा हे नाथ! अब, चारित्रमोह निवारिये।
चारित्र संयम पूर्ण हो, भवसिंधु से अब तारिये।।
प्रभु आप ही पतवार हो, मुझ नाव भवदधि में फंसी।
अब हाथ का अवलंब दो, ना देर कीजे मैं दुखी।।9।।

इन आठ कर्मों में अधिक, बलवान एकहि मोह है।
इसके अट्ठाइस भेद हैं, बहु भेद सर्व असंख्य हैं।।
ये मोहनी ही स्थिती, अनुभाग बंध करे सदा।
ये मोहनी संसार का, है मूल कारण दुःखदा।।10।।

सब आस्रवों के भेद इक, सौ आठ पापास्रव करें।
इस हेतु इक सौ आठ मणि की, जपसरा से जप करें।।
प्रभु तुम सुपार्श्व जिनेंद्र को, जो भव्य जपते भाव से।
वे पाप आस्रव रोककर, नित पुण्य संचें चाव से।।11।।

व्रत पाँच समिती पाँच गुप्ती, तीन दशविध धर्म हैं।
बारह अनूप्रेक्षा परीषह, जय कहे बाईस हैं।।
ये कर्म आस्रव रोकते, संवर करें मुनिजन धरें।
हे नाथ! इनको दीजिए, हम कर्म आस्रव परिहरें।।12।।

जिनभक्ति पूजा मंत्र से, बहु पुण्य संपादन करें।
जिनभक्ति से बलभद्र चक्री, तीर्थंकर पद भी धरें।।

जिनभक्ति से सब ऋद्धि सिद्धी, पाय शिवललना वरें।
जिनभक्ति से ही भक्त निज, आनंद अमृत रस भरें।।13।।

हे नाथ! ऐसी शक्ति दो, मैं सर्व ममता छोड़ दूँ।
निज देह से भी होऊं निर्मम, सब परिग्रह छोड़ दूँ।।
निज आत्म से ममता करूँ, निज आत्म की चर्चा करूँ।
निज आत्म में तल्लीन हो, परमात्म की अर्चा करूँ।।14।।

ऐसा समय तुरतहिं मिले, निजध्यान में सुस्थिर बनूँ।
उपसर्ग परिषह हों भले, निजतत्त्व में ही थिर बनूँ।।
निज आत्म अनुभव रस पियूँ, परमात्मपद की प्राप्ति हो।
निज 'ज्ञानमति' ज्योती दिपे, जो तीनलोक प्रकाशि हो।।15।।

–दोहा –

जब तक नहिं परमात्मपद, तुम पद में मन लीन।
एक घड़ी भी नहिं हटे, बनूं आत्म लवलीन।।16।।

ॐ ह्रीं सर्वास्रवविरहिताय श्रीसुपार्श्वनाथतीर्थंकराय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–शेर छंद –

जो श्रीसुपार्श्वनाथ का, विधान करेंगे।
वे नर व देव के सुखों को, प्राप्त करेंगे।।
फिर कर्मभूमि में जनम ले, साधु बनेंगे।
कैवल्य 'ज्ञानमती' से, ही सिद्ध बनेंगे।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

प्रशस्ति

–दोहा –

तीर्थंकर चक्री मदन, त्रयपद धारी ईश।
शांतिनाथ भगवान को, नमूँ-नमूँ नत शीश।।1।।

कुंथुनाथ-अरनाथ प्रभु, तीन-तीन पद नाथ।
इनके श्री चरणाब्ज को, नमूँ नमाकर माथ।।2।।

वर्तमान में वीर प्रभु, शासनपति भगवान।
इनके शासन में हुये, बहु आचार्य महान।।3।।

मूल-संघ में कुंदकुंद गुरु, अन्वय सरस्वति गच्छ।
बलात्कार गण में हुए , सूरि नमूँ मन स्वच्छ।।4।।

सदी बीसवीं के प्रथम, गुरू दिगंबराचार्य।
चरित चक्रवर्ती श्री, शांतिसागराचार्य।।5।।

इनके शिष्योत्तम श्री, वीरसागराचार्य।
पहले पट्टाचार्य गुरु, नमूँ भक्ति उर धार्य।।6।।

मैंने गणिनी ज्ञानमती, किया विधान प्रपूर्ण।
सुपार्श्वनाथ विधान यह, भरे सौख्य संपूर्ण।।7।।

जब तक जम्बूद्वीप की, कीर्ति जगत में व्याप्त।
तब तक ''ज्ञानमती'' कृती, रहे विश्व विख्यात।।8।।

इति शं भूयात्।

वाराणसी तीर्थ पूजा

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

स्थापना (शंभु छंद)

जिस वाराणसि नगरी का हमने, नाम सुना है ग्रंथों में।
जो पावन और पवित्र सुपारस, पार्श्वनाथ के चरणों से।।
उस जन्मभूमि तीरथ की पूजन, हेतु करूँ आह्वानन मैं।
स्थापन सन्निधिकरण करूँ, वाराणसि तीर्थ का अर्चन मैं।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथ–पार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथ–पार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथ–पार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टकं (शंभु छंद)

हे नाथ! विषयसुख की इच्छा में, मैंने निज को भरमाया।
लेकिन दुःखों की वैतरणी में, किंचित् भी सुख नहिं पाया।।
वाराणसि नगरी का अर्चन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्रीसुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधाग्नी में जलकर अब तक, अपना सर्वस्व लुटाया है।
अब चंदन से पूजा करने का, भाव हृदय में आया है।।
वाराणसि नगरी का अर्चन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्रीसुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षयनिधि की पहचान बिना, जड़ को आत्मा मैंने माना।
पूजन में अक्षत पुंज चढ़ा, अब चाहूँ अक्षय पद पाना।।
वाराणसि नगरी की पूजन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्रीसुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।3।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं कामभोग की मदिरा से, अब तक मतवाला बना रहा।
उसकी संतृप्ति हेतू मैं, अब पुष्पमाल को चढ़ा रहा।।
वाराणसि नगरी का अर्चन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्रीसुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।4।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

इस क्षुधा रोग की ज्वाला से, भव भव में जलता आया हूँ।
उस ज्वाला की उपशांति हेतु, नैवेद्य चढ़ाने आया हूँ।।
वाराणसि नगरी का अर्चन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्री सुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।5।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार में पड़ा-पड़ा, संसार में ही परिभ्रमण किया।
वह मोह दूर करने हेतू, दीपक का अब अवलंब लिया।।
वाराणसि नगरी का अर्चन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्रीसुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।6।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का इस आत्मा के संग, बंधन अनादि से चला किया।
उस बन्धन से मुक्ती हेतू, मैं धूप अग्नि में जला दिया।।

वाराणसि नगरी का अर्चन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्रीसुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।7।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

इतने फल भव-भव में खाये, उसका फल क्या पाया मैंने।
उत्तम शिवफल की आश में अब, फल थाल चढ़ाया है मैंने।।
वाराणसि नगरी का अर्चन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्रीसुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।8।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सांसारिक अभिलाषाओं में, नहिं पद अनर्घ्य पहचान सका।
"चन्दनामती" अब अर्घ्य लिये, किंचित् उस पद को जान सका।।
वाराणसि नगरी का अर्चन, अब मुझको शांति दिलाएगी।
जिसकी पूजन से श्रीसुपार्श्व, पारस की स्मृति आएगी।।9।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

गंगनदी का नीर ले, करूँ तीर्थ पर धार।
आत्मा भी निर्मल बने, पाऊँ शांति अपार।।10।।

शांतये शांतिधारा

वाराणसि उद्यान के, पुष्प सुगंधित लाय।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, वाराणसि के माँहि।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः

वाराणसी तीर्थक्षेत्र के अर्घ्य (शंभु छंद)

भादों सुदि षष्ठी को जहाँ गर्भ, कल्याणक हुआ सुपारस का।
इन्द्रों ने तब उत्सव कीना, जिनवर के गर्भकल्याणक का।।

राजा सुप्रतिष्ठ की रानी पृथ्वी-षेणा भी तब पूज्य बनी।
उस गर्भागम से पावन नगरी, वाराणसि भी वंद्य घनी।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथगर्भकल्याणकपवित्रवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ ज्येष्ठ सुदी बारस तिथि में, जहाँ श्रीसुपार्श्व ने जन्म लिया।
उन जन्मकल्याणक घड़ियों ने, वाराणसि नगरी धन्य किया।।
स्वर्गों में वाद्य स्वयं बाजे, इन्द्रासन भी कम्पा उस क्षण।
उस जन्मभूमि वाराणसि की, अर्चना किया करते सुरगण।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथजन्मकल्याणकपवित्रवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

वाराणसि के उपवन में ही, जिनवर सुपार्श्व ने दीक्षा ली।
ऋतु परिवर्तन लख हो विरक्त, मोही परिजन को शिक्षा दी।।
वह तिथि भी ज्येष्ठ सुदी बारस, जब दीक्षा स्वयं लिया प्रभु ने।
दीक्षाकल्याणक से पवित्र, नगरी को अर्घ्य दिया मैंने।।3।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथदीक्षाकल्याणकपवित्रवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

वाराणसि के उद्यान सहेतुक, में शिरीष तरु के नीचे।
फाल्गुन वदि छट्ठ तिथी को केवल-ज्ञान प्राप्त किया जिनवर ने।।
घाती कर्मों का कर विनाश, शुभ समवसरण लक्ष्मी पाया।
मैं इसीलिए वाराणसि तीरथ, की पूजन करने आया।।4।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथकेवलज्ञानकल्याणकपवित्रवाराणसी-तीर्थक्षेत्राय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

फिर बाद करोड़ों वर्ष जहाँ, प्रभु पार्श्वनाथ इतिहास चला।
वैशाख कृष्ण दुतिया को गर्भ-कल्याणक उत्सव वहाँ मना।।
पितु अश्वसेन माता वामा के, महलों में सुरगण आये।
उस पावन तीर्थ बनारस को, हम अर्घ्य चढ़ाकर हरषाये।।5।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीपार्श्वनाथगर्भकल्याणकपवित्रवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

तिथि पौष कृष्ण ग्यारस को, पारसनाथ जहाँ पर जन्मे थे।
मेरूपर्वत की पांडुशिला पर, अभिषव किया था इन्द्रों ने।।
उस जन्मकल्याणक से पावन, नगरी को अर्घ्य चढ़ाऊँ मैं।
वाराणसि तीरथ है प्रसिद्ध, उसकी गुणगाथा गाऊँ मैं।।6।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीपार्श्वनाथजन्मकल्याणकपवित्रवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जहाँ ऋषभदेव गुणगाथा सुन, पारसप्रभु को वैराग्य हुआ।
तिथि पौष वदी ग्यारस को प्रभु ने, राजपाट सब त्याग दिया।।
उन बालब्रह्मचारी प्रभु के, चरणों में शीश झुका मेरा।
उनकी दीक्षाभूमी वाराणसि, को है कोटि नमन मेरा।।7।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीपार्श्वनाथदीक्षाकल्याणकपवित्रवाराणसीतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जब पार्श्वनाथ भगवान ध्यान में, लीन तपस्या में रत थे।
उपसर्ग किया तब पूर्व जन्म के, बैरी उस कमठासुर ने।।
धरणेंद्र और पद्मावती ने, उपसर्ग प्रभू का दूर किया।।
हुआ केवलज्ञान जहाँ प्रभु को, अहिच्छत्र तीर्थ वह पूज्य हुआ।।8।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीपार्श्वनाथकेवलज्ञानकल्याणकपवित्र-अहिच्छत्रतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

जिनवर सुपार्श्व अरू पार्श्वनाथ के, कल्याणक से पावन जो।
उनके प्राचीन कथानक से, है प्रसिद्ध तीर्थ बनारस वो।।
उस तीरथ से प्रार्थना मेरी, आत्मा भी तीरथ बन जावे।
मैं पूर्ण अर्घ्य अर्पित करता, मुझको अनर्घ्य पद मिल जावे।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथगर्भजन्मादिकल्याणकपवित्रवाराणसि-तीर्थक्षेत्राय पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्यमंत्र- ॐ ह्रीं वाराणसीजन्मभूमिपवित्रीकृत श्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राभ्यां नमः।

जयमाला

(शंभु छंद)

शुभ तीर्थराज वाराणसि को, मेरा है कोटि-कोटि वन्दन।
प्रभु श्रीसुपार्श्व अरु पार्श्वनाथ की, जन्मभूमि को सदा नमन।।टेक.।।

तीर्थंकर श्री वृषभेश्वर की, आज्ञा से बसी नगरियाँ थीं।
उनमें से ही प्रसिद्ध वाराणसि, आदि कई नगरियाँ थीं।।
यहाँ प्रथम आदि तीर्थंकर के, चलते रहते थे सदा भजन।
शुभ तीर्थराज वाराणसि को, मेरा है कोटि-कोटि वन्दन।।1।।

जब-जब स्वर्गों से च्युत होकर, तीर्थंकर यहाँ जनमते थे।
तब-तब धनपति आकर रुचि से, बहुमूल्य रत्न बरसाते थे।।
माता की सेवा करके अष्ट, कुमारी होती थीं प्रसन्न।
शुभ तीर्थराज वाराणसि को, मेरा है कोटि-कोटि वन्दन।।2।।

दो बार हुई पन्द्रह-पन्द्रह, महिने तक यहाँ रतन वर्षा।
सौधर्म इन्द्र इक सहस नेत्र से, प्रभु को देख-देख हर्षा।।
मेरूपर्वत की पाण्डुशिला पर, किया प्रभू का जन्म न्हवन।
शुभ तीर्थराज वाराणसि को, मेरा है कोटि-कोटि वन्दन।।3।।

भगवान जहाँ खेले एवं, स्वर्गों का भोजन किया जहाँ।
तीर्थंकर श्रीसुपार्श्व जिन ने, राजा बन राज्य किया था जहाँ।।
युवराज पार्श्व ने दीक्षा ली, स्वयमेव बालब्रह्मचारी बन।
शुभ तीर्थराज वाराणसि को, मेरा है कोटि-कोटि वंदन।।4।।

सम्मेदशिखर से मोक्ष गये, पारस सुपार्श्व द्वय तीर्थंकर।
उपसर्ग हुआ अहिछत्र में, केवलज्ञान लहा पारस जिनवर।।
तीर्थंकर प्रभु की पदरज से, धरती बन जाती नन्दनवन।
शुभ तीर्थराज वाराणसि को, मेरा है कोटि-कोटि वन्दन।।5।।

है वर्तमान में वाराणसि का, क्षेत्र भदैनी सुखकारी।
वह प्रभु सुपार्श्व की जन्मभूमि, मानी जाती मंगलकारी।।
भेलूपुर पारसनाथ जिनेश्वर, का कहलाता जन्मस्थल।
शुभ तीर्थराज वाराणसि को, मेरा है कोटि-कोटि वंदन।।6।।
यह अर्घ्यथाल स्वीकार करो, आठों द्रव्यों से युक्त मेरा।
यह शब्दमाल स्वीकार करो, गुणवर्णन से संयुक्त मेरा।।
यह भक्तिमाल स्वीकार करो, भावों से मैं करता अर्चन।
शुभ तीर्थराज वाराणसि को, मेरा है कोटि-कोटि वंदन।।7।।

–दोहा–

जन्मभूमि वाराणसी, है जग में सुप्रसिद्ध।
नमन ''चन्दनामती'' सदा, पूजन का है लक्ष्य।।8।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीसुपार्श्वनाथपार्श्वनाथजन्मभूमिवाराणसीतीर्थक्षेत्राय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छन्द-

जो भव्य प्राणी जिनवरों की, जन्मभूमि को नमें।
तीर्थंकरों की चरणरज से, शीश उन पावन बनें।।
कर पुण्य का अर्जन कभी तो, जन्म ऐसा पाएंगे।
तीर्थंकरों की श्रृँखला में, ''चंदना'' वे आएंगे।।1।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिः।

भगवान श्री सुपार्श्वनाथ की आरती

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–फूल तुम्हें भेजा.....

आओ सभी मिल आरति करके, श्री सुपार्श्व गुणगान करें।
मुक्ति रमापति की आरति, सब भव्यों का कल्याण करें।।टेक.।।

धनपति ने आ नगर बनारस, में रत्नों की वर्षा की,
गर्भ बसे भादों सुदि षष्ठी, पृथ्वीषेणा माँ हरषीं,
गर्भकल्याणक की वह तिथि भी, मंगलमय भगवान करें।
मुक्ति रमापति की आरति, सब भव्यों का कल्याण करें।।1।।

ज्येष्ठ सुदी बारस जिनवर का, सुरगिरि पर अभिषेक हुआ,
उस ही तिथि दीक्षा ली प्रभु ने, राज-पाट सब त्याग दिया,
फाल्गुन वदि षष्ठी शुभ तिथि में, केवलज्ञान कल्याण करें।
मुक्ति रमापति की आरति, सब भव्यों का कल्याण करें।।2।।

फाल्गुन वदि सप्तमि को प्रभुवर, श्री सम्मेदशिखर गिरि से,
मुक्तिरमा को वरने हेतू, चले सिद्धिपति बन करके,
कर्मनाश शिव वरने वाले, हमको सिद्धि प्रदान करें।
मुक्ति रमापति की आरति, सब भव्यों का कल्याण करें।।3।।

रत्नथाल में मणिमय दीपक, को प्रज्वलित किया स्वामी,
मोहतिमिर के नाशन हेतू, तव शरणा आते प्राणी,
इसी हेतु ''चंदनामती'', हम भी तेरा गुणगान करें।
मुक्ति रमापति की आरति, सब भव्यों का कल्याण करें।।4।।

वाराणसी तीर्थ की आरती

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–आओ बच्चों.....

चलो सभी मिल करें आरती, वाराणसि शुभ धाम की।
श्री सुपार्श्व अरु पार्श्वनाथ के, जन्मकल्याण स्थान की।।
जय जय पार्श्व जिनं, प्रभो सुपार्श्व जिनं।।टेक.।।

काशी नाम से जानी जाती, वाराणसि यह प्यारी है।
इन्द्र ने जिसे सजाया कर दी, रत्नों की उजियारी है।।
वर्णन जिसका अगम-अकथ है, महिमा जन्मस्थान की।।श्री.।।जय.।।1।।

श्री सुपार्श्व तीर्थंकर प्रभु के, चार यहाँ कल्याण हुए।
पृथ्वीषेणा के संग राजा, सुप्रतिष्ठ भी धन्य हुए।।
श्री सम्मेदशिखर गिरि है उन, प्रभुवर का शिवधाम जी।।श्री.।।जय.।।2।।

पुनः इसी पावन भूमी पर, पारसप्रभु ने जन्म लिया।
अश्वसेन के राजदुलारे, वामा माँ को धन्य किया।
यहीं अश्ववन में दीक्षा ले, चले राह शिवधाम की।।श्री.।।जय.।।3।।

अहिच्छत्र में ज्ञान मिला, सम्मेदशिखर निर्वाण हुआ।
बाल ब्रह्मचारी पारस प्रभु, का हम सबने ध्यान किया।।
सांवरिया मनहारी प्रभु की, महिमा अपरम्पार जी।।श्री.।।जय.।।4।।

प्रभु तुम सम पद पाने हेतू, इस तीरथ को सदा नमूँ।
वाराणसि नगरी की माटी, शीश चढ़ा प्रभु पद प्रणमूँ।।
भाव यही''चंदनामती'', हर आत्मा बने महान भी।।श्री.।।जय.।।5।।

हुई स्वयंवर प्रथा यहाँ से, ही प्रारंभ कहा जाता।
पद्म नाम के चक्रवर्ति का, जन्म यहीं माना जाता।।
भरे कई इतिहास हृदय में, अतिशययुक्त महान भी।।श्री.।।जय.।।6।।

समन्तभद्राचार्य गुरू की, भस्मक व्याधी शांत हुई।
चन्द्रप्रभू की प्रतिमा प्रगटी, जैनधर्म की क्रान्ति हुई।।
विद्या का यह केन्द्र बनारस, जग में ख्यातीमान भी।।श्री.।।जय.।।7।।

भजन

(माता के 16 स्वप्न दर्शन)

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

–शेर छंद–

पहले स्वपन में माता गज देख रही हैं।
सुन्दर सफेद हाथी गर्जन से युक्त है।।
त्रैलोक्य पूज्य पुत्र को वह प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।1।।

उत्तुंग वृषभ देखतीं द्वितीय स्वप्न में।
अति रून्द्रतर ध्वनी से युक्त शुभ गवेन्द्र है।।
त्रयज्ञानधारि श्रेष्ठ सुत को प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।2।।

माँ देख रही सिंह को तृतीय स्वप्न में।
पर्वत समान गज का भी मद नाश करे है।।
आनंत शक्तियुक्त पुत्र प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।3।।

चौथे स्वपन में देखतीं कमलासनी लक्ष्मी।
जो स्वर्णकुम्भ से स्नान प्राप्त कर रहीं।।
जन्माभिषेकयुक्त सुत को प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।4।।

मंदार की माला युगल ये देख रहीं हैं।
सुंदर खिली पंचम स्वपन में देख रहीं हैं।।
सद्धर्म प्रचारक सुपुत्र प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।5।।

छट्ठे स्वपन में श्वेत दुग्ध सम है चंद्रमा।
माता को मानो दे रहा अमृत सुखोपमा।।

त्रैलोक्य आल्हादक सुपुत्र प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।6।।

सप्तम स्वपन में सूर्यबिम्ब देख रहीं माँ।
जग का तिमिर विनाश वह प्रकाश भर रहा।।
इस फल में माँ तेजस्वी पुत्र प्राप्त करेगीं।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।7।।

मछली युगल को देख रहीं मात नींद में।
अष्टम स्वपन में क्रीड़ा करती हुई मीन हैं।।
अतिशय प्रसन्न पुत्र को वे प्राप्त करेंगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।8।।

दो स्वर्ण कुंभ देखतीं माँ नवम स्वप्न में।
सुन्दर सजे अमृत से वे आकण्ठ भरे हैं।।
निधियों की प्राप्ति वाले सुत को मात लहेंगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।9।।

दसवें में प्रफुल्लित कमल से युक्त सरोवर।
माँ देख रहीं स्वप्न में सुन्दर सा सरोवर।।
वे पुत्र सहस लक्षणों युत प्राप्त करेंगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।10।।

रत्नों से युक्त सागर लहराता हुआ है।
माता को ग्यारवें स्वपन में दीख रहा है।।
वे केवलीज्ञानी सुपुत्र प्राप्त करेंगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।11।।

रत्नों की कांतियुक्त सिंहपीठ देखतीं।
माँ बारवें स्वपन में सिंहासन को देखतीं।।
त्रैलोक्यपती पुत्र को वह प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।12।।

मणियों से बना देव का विमान दिख रहा।
अब तेरवें स्वपन में माँ को पूर्ण सुख कहा।।

स्वर्गावतीर्ण पुत्र को वह प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।13।।

देखा स्वपन में चौदवें शुभ नाग विमाना।
माता को वह विमान मानो सूर्य समाना।।
वह अवधिज्ञानयुक्त पुत्र प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।14।।

पन्द्रहवें स्वप्न में रतन की राशि देखतीं।
जो अपनी चमक से दिशाओं को प्रकाशती।।
माता अनन्तगुणी पुत्र प्राप्त करेगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।15।।

निर्धूम अग्नि देखतीं सोलहवें स्वप्न में।
सर्दी व अंधेरे को दूर जो करे क्षण में।।
पापों से रहित पुत्र को वे प्राप्त करेंगी।
जननी जगत जननी का लाभ प्राप्त करेगी।।16।।

–शंभु छंद–

ये स्वप्न देखकर माता प्रातः सुखद नींद से जगती हैं।
बाजों व प्रभाती के मंगल स्वर सुनकर निद्रा तजती हैं।।
उन स्वप्नों का फल पति से फिर सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुईं।
मानों मैंने तीर्थंकर सुत को पा ही लिया वे तृप्त हुईं।।17।।

भजन

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

नाम तिहारा तारनहारा कब तेरा दर्शन होगा।
तेरी प्रतिमा इतनी सुन्दर, तू कितना सुन्दर होगा।। टेक.।।

जाने कितनी माताओं ने, कितने सुत जन्में हैं।
पर इस वसुधा पर तेरे सम, कोई नहीं बने हैं।।
पूर्व दिशा में सूर्य देव सम, सदा तेरा सुमिरन होगा।
तेरी प्रतिमा इतनी सुन्दर, तू कितना सुन्दर होगा।।1।।

पृथ्वी के सुन्दर परमाणू, सब तुझमें ही समा गए।
केवल उतने ही अणु मिलकर, तेरी रचना बना गए।।
इसीलिए तुझ सम सुन्दर नहिं, कोई नर सुन्दर होगा।
तेरी प्रतिमा इतनी सुन्दर, तू कितना सुन्दर होगा।।2।।

मन में तव सुमिरन करने से, पाप सभी नश जाते हैं।
यदि प्रत्यक्ष करें तव दर्शन, मनवांछित फल पाते हैं।।
आज ''चंदनामती'' प्रभू का, अनुपम गुण कीर्तन होगा।
तेरी प्रतिमा इतनी सुन्दर, तू कितना सुन्दर होगा।।3।।

भजन

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–फूलों सा चेहरा तेरा.....

शाश्वत है तीरथ मेरा, सम्मेदगिरि नाम है।
गिरिवरों में श्रेष्ठ है, आदि सिद्धक्षेत्र है, मधुवन परम धाम है।। टेक.।।

कहते हैं इस गिरि की वन्दना से,
तिर्यंच नरकायु मिलती नहीं है।
श्रद्धा सहित इसकी अर्चना से,
भव्यत्व कलिका खिलती रही है।।
रात अंधेरी हो, भक्ति सहेली हो, लगता न डर पर्वत पर कभी।
अतिशय से गूँजे यहाँ, सांवरिया का नाम है।
गिरिवरों में श्रेष्ठ है, आदि सिद्धक्षेत्र है, मधुवन परम धाम है।।1।।

इस युग के चौबिस तीर्थंकरों में,
मोक्ष गए बीस जिनवर यहाँ से।
कितने करोड़ों मुनियों ने भी,
तप करके शिवालय पाया यहाँ से।।
तीर्थ पुराना है, श्रेष्ठ खजाना है, सबको तिराता है संसार से।
तीरथ की कीरत अमर, कर सकता इंसान है।
गिरिवरों में श्रेष्ठ है, आदि सिद्धक्षेत्र है, मधुवन परम धाम है।2।।

जिनधर्म निधि को पाकर के उसका,
सच्चा सदुपयोग करना है हमको।
आपस में मैत्री, दीनों पे करुणा,
का भाव जग में सिखाना है सबको।।
स्वार्थ त्याग करके, शीघ्र जाग करके, जैनत्व की सब रक्षा करो।
तीरथ की रज ''चन्दनामति'' मस्तक का परिधान है।
गिरिवरों में श्रेष्ठ है, आदि सिद्धक्षेत्र है, मधुवन परम धाम है।।3।।